P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राजस्थान के अलीबख्शी ख्याल एवं हेला ख्याल की परम्परा

हितेश गंधर्व,
सहायक प्राध्यापक,
संगीत विभाग,
जर्नादन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ,
मानिक्य लाल वर्मा श्रमजीवी ईवनिंग कालेज,
उदयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

ख्याल गायन रचना को विभिन्न स्वरों के माध्यम से विभाजित किया जाता है, जिसमें दोहा, चट्ठा, टेर, चलत, हरियाणा, कली, ऐजी, बारहमासी, कली, मोटरवाला, फिल्मी तर्ज, झड़ी, रसिया, शहर, दौड़, सारंग, ध्वनि एवं झील प्रमुख विभाजन है। ये स्वर क्षेत्र विशेष के हिसाब से बदल जाते हैं और गायक अपनी निजी तर्ज के आधार पर रचनाओं के गायन में थोड़ा मोड़ दे देते हैं। अलीबक्ष ने स्वाँगों की मंडली का उस समय निर्माण किया जब ब्रजक्षेत्र में भगत और स्वाँगों की अखाड़ेबाजी ज़ोरो पर उभर रही थी। वे सम्भवतः इसी लिए अपनी मंडली को हरियाणा व राजस्थान में ले गए क्योंकि ब्रज में तब तक स्वाँग अखाड़ो (भगत के) की ही संपत्ति थे। पूर्वी राजस्थान में हेला ख्याल की परम्परा काफी प्राचीन रही है और विगत काफी वर्षों से इस विधा को विभिन्न क्षेत्रों में अच्छी पहचान मिली है। राज्य के पूर्वी भाग विशेषकर करौली, सवाई माधोपुर, दौसा, लालसोट क्षेत्र में हेला ख्याल बहुत प्रसिद्ध रहा है। इस क्षेत्र में आमजन के लोकानुरंजन हेतु यह एक सशक्त विधा रही है।

मुख्य शब्द : लोकनाट्य, राजस्थान, गायन, अलीबख्शी ख्याल, हेला ख्याल, नौबत, रचना, स्वाँग, ध्वनि, खेल, प्रदर्शन, मंच।

प्रस्तावना

अलीबख्शी ख्याल

अलीबख्शी ख्याल परंपरा की चर्चा से पहले, अलीबक्ष कौन थे, यह जान लेना आवश्यक है। अलीबक्ष अलवर राज्य के गांव मंडावर के निवासी टीकावत राजपूत थे जो अलवर नरेश मंगलसिंह जी के समकालीन थे। इनका जन्म संवत् 1911 विक्रमी अर्थात् ईसवी सन् 1854 के आसपास हुआ था और केवल 45 वर्ष की अल्पायु में ही यह विक्रमी सवंत् 1956 अर्थात् सन् 1866 में ही स्वर्गवासी हो गए। अलीबक्ष आरंभ से ही संगीत के प्रेमी व कुशल गायक थे। कहा जाता है कि एक बार हाथरस की ओर से इनके गांव में कोई स्वाँग मंडली प्रदर्शन करने आई। अलीबक्ष मंच पर बैठे आनन्दपूर्वक उसका प्रदर्शन देख रहे थे कि किसी ने उन पर व्यंग कसा, ''ठाकुर साहब! यह मंच तो केवल ब्राह्मणों के लिए है और कोई इस पर नहीं बैठ सकता। यदि आपको मंच पर बैठने का अधिक शौक है तो खुद की मंडली खड़ी कर दीजिए।'' ठाकुर साहब इस अपमान से आहत होकर एकदम मंच से उठ खड़े हुए। वे उसी समय मंडावर छोड़कर रात में ही रेणागिरी गांव के निकट काला पहाड़ पर तप में लीन बाबा गरीबदास के पास पहुंचे और उन्हें अपने अपमान की बात बतलाई। साधु ने उन्हें सान्त्वना और आर्शीवाद दिया कि तुम मंडली बनाओ, इस कार्य में अवश्य सफल होगे। धुन के पक्के अलीबक्ष, बाबा का आशीर्वाद पाकर लौट आए और उन्होंने स्वयं लंगड़ी लावनी, चौबोला, जिकड़ी, बेहर, शकिश्त, गज़ल, भजन आदि में ख्यालों (स्वांगों) की रचना प्रारंभ की और मंडली बनाकर उनका प्रदर्शन आरंभ कर दिया, जिसमें उन्हें यथेष्ट धन और मान–प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अपने जीवन–काल में अलीबक्ष ने अनेक ख्याल लिखे और खेले थे। उनमें से निम्न बहुत प्रसिद्ध है : (1) राजा नल का बगदाव, (2) राजा नल का छड़ाव, (3) पद्मावत, (4) कृष्णलीला, (5) फिसाना अजाइब, (6) निहालदे, (7) चंद्रावल, (8) गुलबकावली, (9) महाराज शिवदान सिंह का बारहमासा, (10) अलवर का सिफलतनामा। यह ख्याल भेंट, दोहा, सेंधू, ठुमरी तथा माँझ आदि छंदो में रचे गए हैं। इनकी भाषा का एक नमूना देखें जो ब्रजभाषा ही है, क्योंकि अलवर ब्रजभाषा का ही सीमावर्ती क्षेत्र है –

लोगो लुट गई री हम बेरनियाँ।
बेरनियाँ री हम बेरनियाँ।
लोगो लुट गई री हम बेरनियाँ
आज सुहाग हमारे री उनरे,
हिलकर लागीं मेरी छतियाँ।। लोगो
कोंन दिलास देय री पिया बिन,
वर्षन लागी है अँखियाँ।। लोगो

अलीबक्ष के प्रदर्शन–क्षेत्र

अलीबक्ष ने स्वाँगों की मंडली का उस समय निर्माण किया जब ब्रजक्षेत्र में भगत और स्वाँगों की अखाड़ेबाजी ज़ोरो पर उभर रही थी। वे सम्भवतः इसी लिए अपनी मंडली को हरियाणा व राजस्थान में ले गए क्योंकि ब्रज में तब तक स्वाँग अखाड़ो (भगत के) की ही संपत्ति थे। यहां व्यावसायिक आधार पर तब प्रदर्शन नहीं होते थे। अलीबक्ष पर आरंभ में अपने इतने साधन भी नहीं होंगे कि वे इन सामूहिक शक्ति–सम्पन्न अखाड़ों से मुकाबला करते। अपने तमाशा 'फिसाना अजाइब' में वे अपना परिचय यों देते है–

दोहा – राजपूत हूँ टीकावत, मेरा अलीबक्श है नाम।
नगर मुडाकर सूबहट बसियो, है मेरा निज धाम।
तोड़– रेवाड़ी बना रहे गुलजार।
तमाशा किया बीच बाज़ार।।

अलीबक्ष के ये स्वाँग हरियारो के दक्षिण व पूर्वी भाग में कई दशाब्दी तक प्रचलित रहे जिसे प्रेरणा लेकर बाद में दीपचन्द, सरूपचंद व पं माँगेराम आदि ने विभिन्न स्वाँगों की हरियानी में रचना की।'[1]

हेला ख्याल

यह सामवेत गान है, इसलिए मण्डली के सभी गायक 'नौबत' के चारों ओर घेरे के रूप में खड़े हो जाते हैं। सर्व प्रथम 'तोर' लेने के लिए 'नौबत' पर 'डंकों' के चोट मारी जाती है, तत्पश्चात 'मण्डली' के प्रमुख गायक साखी में 'भवानी' की स्तुति करते हैं। बाद में ख्याल के प्रथम भाग में जिसे 'पीड़ा' कहते हैं, 'ख्याल' का सारांश संकेत रूप में प्रस्तुत कर दिया जाता है और जैसे ही 'पीड़ा' की परिसमाप्ति हुई कि अन्य गायक 'अजी–ए–हो'

की टेर लगाते हैं और यह टेर बहुत ही लम्बी और हृदय को आह्लादित करने वाली होती है। टेर के समाप्त होने पर 'ख्याल' का शेष भाग जिसे 'कली' कहा जाता है, गाया जाता है। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की राग, ताल और लय निहीत होती है। आजकल तो 'फिल्मी तर्ज' भी ख्यालों में समा गई है।[2]

पूर्वी राजस्थान में हेला ख्याल की परम्परा काफी प्राचीन रही है और विगत काफी वर्षों से इस विधा को विभिन्न क्षेत्रों में अच्छी पहचान मिली है। राज्य के पूर्वी भाग विशेषकर करौली, सवाई माधोपुर, दौसा, लालसोट क्षेत्र में हेला ख्याल बहुत प्रसिद्ध रहा है। इस क्षेत्र में आमजन के लोकानुरंजन हेतु यह एक सशक्त विधा रही है।[3]

हेला ख्याल गायन के इतिहास के बारे में ठीक से कोई प्रामाणिक दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं। इसका कारण यह रहा कि इस विधा के बारे में आज तक कोई प्रामाणिक लेखन नहीं हुआ। किन्तु यह निश्चित है कि करीब पिछले एक–दो सदियों से यह परम्परा चली आ रही है। दौसा, करौली, सवाई माधोपुर, अलवर, धौलपुर, टोंक क्षेत्र एवं जयपुर जिले के कुछ भाग ऐसे है जहाँ पर इस विधा को गाया एवं सुना जाता है। इसका सर्वविदित स्थल लालसोट मण्डावरी (दौसा) क्षेत्र है, जहाँ इसके गायन हेतु बड़े–बड़े दंगल आयोजितृ किये जाते हैं।[4]

श्री लालारामजी की ''आठविसा कटरा बाजार ख्याल मण्डली, मीना बड़ौदा'' सम्पूर्ण क्षेत्र में विख्यात थी और समीप के क्षेत्रों में बसन्त पंचमी से शुरु होकर देवशयनी एकादशी तक जमकर ख्याल गाये जाते थै वैसे तो श्री लालारामजी ने करीब 100 के आस–पास ख्याल रचनाएँ तैयार की थी, किन्तु इस पुस्तक में उनकी प्रमुख रचनाओं विशेषकर पौराणिक, धार्मिक व कुछ समसामयिक कथानकों का ही संग्रह किया गया है। हेला के माध्यम से समय–समय पर भ्रष्टाचार, दहेज प्रथा, बाल विवाह,

जातिवाद, निरक्षरता, राजनीतिक घटनाएँ एवं सामाजिक कुरीतियों को जनता के सामने प्रस्तुत किया जाता रहा है, जिससे समाज में एक अच्छा संदेश देने की कोशिश की जाती है।

आपके ख्याल मंडल ने क्षेत्र के विभिन्न स्थलों में जैसे– सुरेठ घाघरेण रूदावाल, करौली, कसारा, मावली, सरमपुरा, श्री महावीर जी, सवाई माधोपुर, रायपुर, गंगापुर सिटी आदि क्षेत्रों में हेला ख्यालों की उत्कृष्ट रचनाओं की प्रस्तुति दी थी। आज भी आपकी ख्यान रचनाऐं विख्यात है और वहाँ के लोगों द्वारा अब भी विभिन्न पर्वों व दंगल आदि में गाई जाती है।

इसकी सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसे पूर्व में सुनियोजित तरीके से तैयार कर लिखकर कई बार गाया जाता है, तभी इसे प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें तुरन्त जोड़कर किसी भी घटना को वर्णित नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार यह विधा मेहनत एवं कठिन प्रयास से बनाकर ही प्रस्तुत की जा सकती है। कवि सम्मेलन या नुक्कड़ कार्यक्रमों की तरह इसे तैयार नहीं किया जा सकता है और न ही इसमें किसी प्रकार का बदलाव सम्भव होता है।

अनेक जगहों पर ख्याल प्रेमियों द्वारा दंगल आयोजित किये जाते थे, जो दो से तीन दिवस तक लगातार चलते थे। इन दंगलों में खास बात यह थी कि गाँव के सभी परिवार मिलकर अनाज व पैसा इकट्ठा करते थे और उसी से बाहर से जो दल बुलाये जाते थे उनके भोजन आदि की व्यवस्था की जाती थी। इससे आयोजक गाँव या बस्ती की एकजुटता व संगीत के प्रति समर्पण की भावना देखने को मिलती थी। रात्रि के समय जब गाँव के किसी चौराहे पर बैठकर ख्याल मण्डली द्वारा अभ्यास किया जाता था, जिसे आम भाषा में ''रग्गी'' कहते हैं।

हेला के माध्यम से गायक किसी धार्मिक, सामाजिक, पौराणिक या समसामयिक विषय पर आधारित घटना को पद्य रचना के माध्यम से श्रोताओं के सामने पेश करते हैं एवं सभी दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करते हैं। इसमें सर्वप्रथम आराध्य देवी की स्तुति ''भवानी'' के रूप की जाती है, जिसमें कैला देवी व दुर्गा माता की महिमा का गुणगान किया जाता है, इसके बाद दोहा से गायन की शुरूआत होती है। इसमें करीब 30–40 कलाकार होते हैं, जिनमें दो समूह बनाये जाते हैं। एक समूह झील या टेर देने के लिए नगाड़े के पास खड़ा रहता है एवं दूसरा समूह जनता के बीच दर्शकों के अन्दर खड़ा होकर गाता है। प्रायः ख्याल को दोहराकर गाया जाता है। एक बार बायीं तरफ की ओर व दूसरे दांयी तरफ की ओर ताकि सारे श्रोता जो बैठे रहते हैं, ठीक प्रकार से कथानक को समझ सकें। प्रत्येक ख्याल सामान्यतः दो भागों में होता है। करीब 30–35 मिनट में पहला भाग पूर्ण हो जाता है, इसके बाद थोड़ा सा विराम लिया जाता है, फिर पुनः बचे हुए आधे ख्याल को इसी तरह गाया जाता है। इस प्रकार एक ख्याल गाने में करीब 45 मिनट से 1 घण्टे तक का समय लग जाता है। ख्याल गायन हेतु नौबत या नगाड़ा, ढ़ोलक, मंजीरा, हारमोनियम, झाँझ, खन्जरी व चिमटा आदि वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

ख्याल गायन रचना को विभिन्न स्वरों के माध्यम से विभाजित किया जाता है, जिसमें दोहा, चट्ठा, टेर, चलत, हरियाणा, कली, ऐजी, बारहमासी, कली, मोटरवाला, फिल्मी तर्ज, झड़ी, रसिया, शहर, दौड़, सारंग, ध्वनि एवं झील प्रमुख विभाजन है। ये स्वर क्षेत्र विशेष के हिसाब से बदल जाते हैं और गायक अपनी निजी तर्ज के आधार पर रचनाओं के गायन में थोड़ा मोड़ दे देते हैं। जैसे गंगापुर क्षेत्र में 'साखी' नहीं चलती है, किन्तु बामनवास क्षेत्र में इसे जोड़ दिया गया है। ख्याल रचनाओं में ज्यादातर में अन्त में दूसरे गायकों को एक चुनौती स्वरूप प्रश्न किया जाता है और उम्मीद की जाती है कि उसका जवाब ख्याल के माध्यम से ही दिया जाये। इस प्रकार ग्रामीण अंचल में धार्मिक कथाओं की गूढ़ता एवं गहनता पर श्री लालाराम जी ने पूरा ध्यान दिया था। प्रायः सभी ख्याल रचनाकार के नाम के साथ समाप्त होते हैं इसीलिये श्री शर्मा जी का नाम प्रायः सभी रचनाओं के अन्त में जुड़ा हुआ है।

इन रचनाओं में जगरौटी क्षेत्र (हिण्डौन, गंगापुर एवं करौली के बीच का क्षेत्र जो रेल्वे लाइन से पूर्व में हैं) तथा माड़ क्षेत्र (जो कि बामनवास, गंगापुर एवं नादौती तहसील का भाग है) की क्षेत्रीय प्रचलित भाषा का प्रयोग किया गया है जो कि हिंदी, बृज, अवधि, ढूँढाडी एवं उर्दू भाषा का मिला जुला रूप है।[5]

शुरूआत के सभी वाद्ययंत्रों को एक साथ बजाकर कुछ कलाकारों द्वारा लोकनृत्य किया जाता है, जिसे ''बाजा मिलाना'' कहा जाता है। यह करीब 10–15 मिनट तक किया जाता है। इस विधा के गायक सभी कलाकार पुरुष ही होते हैं। यह विधा सुर एवं संगम की अति मधुर एवं मनोरंजक प्रस्तुति होती है।

नौबत

यह 'हेला के ख्याल' का महत्वपूर्ण खालवाद्य है। लगभग चार साढे चार फीट ऊंची अर्द्धगोलाकार ऊपर से चौड़ी और नीचे से संकरी लोह से बनी होती है जिस पर भैंसे का चमड़ा चढ़ाया जाता है। इसके नीचे के भाग को तला कहते है जिसमें एक छिद्र होता है। इसके मढ़ने के लिए भैंसे के चमड़े की रस्सी ही काम में लाई जाती है। अच्छा और आकर्षक 'तोर' लेने के लिए इसे 'घी' और 'हल्दी' से तर रखा जाता है।

यह दो लकड़ी के डंकों की सहायता से बजाया जाता है। इस पर 8 मात्रा का ठेका भी लगता है। गांवों में प्रचलित ख्यालों के साथ होली के अवसर पर इसकी ध्वनि बहुत ही हृदयग्राही और जोश प्रदान करने वाली होती है। युद्ध के समय सेना को जोश दिलाने के लिए भी यही वाद्य बजाया जाता था।[6]

अध्ययन का उद्देश्य

राजस्थान की ख्याल परम्परा में अलीबख्शी ख्याल एवं हेला ख्याल को जन–जन तक पहुँचा कर, हमारी सांगीतिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को सभी के समक्ष लाने के साथ राजस्थान की लोकनाट्य एवं लोकसंगीत परम्परा में ख्यालों के कई रूपों को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

निष्कर्ष

रामनारायण अग्रवाल, कल्याण प्रसाद वर्मा, लालाराम शर्मा आप सभी ने अलीबख्शी ख्याल, हेला ख्याल एवं लोकनाट्य एवं ख्याल साहित्य की परम्परा को अपनी पुस्तकों के माध्यम से उजागर कर जीवित रखने का प्रयास किया है। राजस्थान में खेले जहाने वाले ख्यालों को प्रकाशन भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर (राज.) के माध्यम से आज लुप्त होती परम्परा में अपना अथक योगदान देकर ख्याल परम्परा जीवित रखने का प्रयास सराहनीय है।

अंत टिप्पर्णी

1. *अग्रवाल, रामनारायण (1976), ''सांगीत'' एक लोकनाट्य परम्परा'', राजपाल एंड संस, दिल्ली, पृ.सं. 37–38.*
2. *वर्मा, कल्याण प्रसाद (1972), ''करौली क्षेत्र का ख्याल साहित्य'', भारतय लोक मंडल, उदयपुर, पृ.सं. 29.*
3. *शर्मा, लालाराम (2012), 'हैला ख्याल'', जवाहर कला केन्द्र, जयपुर, पृ.सं. VIII*
4. *वर्मा, कल्याण प्रसाद (1972), ''करौली क्षेत्र का ख्याल साहित्य'', भारतय लोक मंडल, उदयपुर, पृ.सं. 30.*
5. *शर्मा, लालाराम (2012), 'हैला ख्याल'', जवाहर कला केन्द्र, जयपुर, पृ.सं. VII, VII, XI*
6. *वर्मा, कल्याण प्रसाद (1972), ''करौली क्षेत्र का ख्याल साहित्य'', भारतय लोक मंडल, उदयपुर, पृ.सं. 30.*